इकाई 4 भारत में मध्य युग में पर्यावरण के मुद्दे*

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 प्राकृतिक आपदाएं

4.2.1 सूखा और बाढ़

4.2.2 भूकंप

4.2.3 भारी वर्षा और हिमपात

4.3 वनस्पति और जीव

4.3.1 विदेशी जानवरों और पौधों का आदान–प्रदान

4.3.2 शिकार और बंदी जानवर

4.3.3 पशु और गतिशीलता

4.3.4 पशु और भोजन

4.4 प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग

4.4.1 जल प्रबंधन

4.4.2 भूमि

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

* डॉ. ऋचा सिंह, पी.एच.डी., इतिहास अध्ययन केंद्र, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली।

4.5 व्यापार और उद्योग

4.6 सारांश

4.7 शब्दावली

4.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.9 संदर्भ ग्रंथ

4.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के निम्नलिखित उद्देश्य हैं:

- मध्यकालीन भारतीय इतिहास को एक अलग दृष्टिकोण से समझना जिसमें ऐतिहासिक विकास को आकार देने में पर्यावरण प्रमुख कारकों में से एक था;
- इस अवधि के दौरान मानव जीवन पर पर्यावरण के प्रभाव और पर्यावरण पर मानव क्रियाओं के प्रभाव पर ऐतिहासिक ज्ञान प्राप्त करना; और
- उन तरीकों को देखना जिसके माध्यम से मध्यकालीन राज्यों ने प्राकृतिक संसाधनों को जुटाया और उनका उपयोग किया और उनके उपयोग को नियंत्रित करने के लिए प्रयास किए।

4.1 प्रस्तावना

इतिहास लेखन 1970 के दशक से पहले पर्यावरण और मानव समाज पर इसके प्रभाव से संबंधित विभिन्न मुद्दों पर शायद ही सीधे तौर पर प्रकाश डालता है। मुख्य महत्व कृषि योग्य भूमि पर था। तदनुसार वन, पशुचारण भूमि, पर्वत, दलदलों की उपेक्षा की गई। सर जदुनाथ सरकार ने मुख्य रूप से मुगल

साम्राज्य के राजनीतिक इतिहास पर काम किया है और इन्होंने दक्षिण में मुगल सैन्य अभियानों के कारण पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभाव पर प्रकाश डाला है। हालांकि पर्यावरण क्षरण के बारे में अधिक जानकारी उपलब्ध नहीं है। मध्यकालीन भारत में मानव पर्यावरण संबंधों को समझने की दिशा में एक प्रमुख योगदान वर्षक्रमिक (Annales) इतिहासकारों द्वारा दिया गया है। हरबंस मुखिया ने एनाल्स इतिहासकारों के ऐतिहासिक लेखन से प्रभावित होकर 'क्या भारतीय इतिहास में सामंतवाद था?' लिखा और एक उप–विषय के रूप में पर्यावरण और सामाजिक संरचनाओं के बीच संबंध पर प्रकाश डाला और भारतीय सामंतवाद के सिद्धांत का विरोध किया। उन्होंने दिखाया कि मध्यकालीन भारत की पारिस्थितिकी यूरोप की पारिस्थितिकी से कैसे भिन्न है। उदाहरण के लिए, भारतीय पारिस्थितिकी की विशेषता लगभग 10 महीने की धूप थी और मिट्टी को गहरी खुदाई की आवश्यकता नहीं थी। भारतीय बैल का कूबड़ यूरोपीय सांड की सीधी पीठ के विपरीत मिट्टी की जुताई के लिए इस्तेमाल किया जाता था। फलस्वरूप, यहाँ कृषि उत्पादकता यूरोप की तुलना में बहुत अधिक थी। यूरोप में 19वीं शताब्दी तक प्रति वर्ष दो फसलें नहीं उगाई जा सकती थीं, जबकि मध्यकालीन भारत में यह स्थिति बिल्कुल विपरीत थी।

भारत के पर्यावरणीय इतिहास पर प्रारंभिक लेखन में प्राकृतिक संसाधनों पर राज्य के हस्तक्षेपवादी रवैये का श्रेय औपनिवेशिक और उत्तर–औपनिवेशिक काल को दिया जाता है। हालांकि मध्यकालीन राज्य नियमित राजस्व सुनिश्चित करने के लिए प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन और विनियोग में सक्रिय रूप से संलग्न थे। कृषि उपज पर कर राजस्व का मुख्य स्रोत था। इस प्रकार राज्य ने

कृषि योग्य भूमि के विस्तार के लिए नई तकनीकों की शुरुआत, सिंचाई सुविधाओं का प्रावधान आदि जैसे उपाय किए। सबसे उपजाऊ कृषि भूमि से एकत्र किया गया कर शासकों के निजी खजाने के लिए आरक्षित था। दिल्ली सल्तनत और मुगल काल में ''खालिसा'' भूमि केंद्र सरकार के सीधे नियंत्रण में थी। मुगलों के पास ''शिकारगाह–ए–मुकर्रर'' (आरक्षित शाही शिकार के मैदान) थे। गैर–कृषि कर भी लगाए गए जिनसे गैर–कृषि भूमि पर राज्य का नियंत्रण बढ़ गया। उदाहरण के लिए, मारवाड़ के शुष्क क्षेत्रों में पशु मालिकों ने चराई के मैदानों का उपयोग करने के लिए ''घासमारी'' (Ghasmari) और ''पंचराई'' (Pancharai) करों का भुगतान किया। घास की बिक्री पर कर लगाया गया। अनाधिकृत घास काटना एक दंडनीय अपराध था। किसान को अपने खेत में उगाई जाने वाली घास के कुछ हिस्से देने पड़ते थे क्योंकि राज्य को अपने युद्ध पशुओं के लिए चारे की आवश्यकता होती थी। अलाउद्दीन खिलजी ने भी चराई कर लगाया था।

यह निश्चित है कि मध्ययुगीन काल के दौरान साम्राज्य और राज्य युद्धों और लड़ाइयों में और परिवहन के साधनों के लिए जानवरों पर बहुत अधिक निर्भर थे और उनके महत्वपूर्ण शाही शगलों (pastimes) में शिकार भी शामिल था। राज्यों ने वनस्पतियों और जीवों पर अपना नियंत्रण प्रदर्शित करने का प्रयास किया। तदनुसार, शासकों ने कुछ जानवरों के वध या हरे पेडों को काटने और प्राकृतिक संसाधनों को नष्ट करने की कोशिश करने वालों को दंडित करने के लिए शाही आदेश जारी किए। इस इकाई में आप देखेंगे कि मानव और पर्यावरण – (क) प्राकृतिक, जिसमें जैविक जैसे वनस्पति और जीव, और

अजैविक जैसे भूमि, जल और वायु शामिल हैं और (ख) मानव–निर्मित जैसे परिवहन के साधन, बस्तियाँ, भोजन आदि शामिल हैं) के बीच संबंध किस प्रकार स्थापित किया गया था।

4.2 प्राकृतिक आपदाएं

भूकंप, बाढ़ और सूखे जैसी प्राकृतिक आपदाओं ने आबादी पर दीर्घकालिक पर्यावरणीय, आर्थिक और स्वास्थ्य संबंधी प्रभाव डाला। इसके साथ ही खराब मौसम की स्थिति जैसे भारी वर्षा, बर्फबारी और नदी के मार्ग में परिवर्तन आदि मानव जीवन और विकास को बाधित करते थे और कई बार इन आपदाओं ने लोगों की प्रकृति का सम्मान करने और उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करने की आवश्यकता का एहसास करने के लिए मजबूर किया, जिसके फलस्वरूप नई विश्वास प्रणालियों और प्रथाओं की शुरुआत हुई।

4.2.1 सूखा और बाढ़

मध्यकालीन भारत में वार्षिक वर्षा के मध्यकालीन भारत में वार्षिक वर्षा के लिए मानसून पर निर्भरता और विभिन्न क्षेत्रों में इसके आकाशीय वितरण के कारण बार–बार अकाल पड़ते थे। ऐसी स्थिति में जब अपर्याप्त वर्षा या दो से अधिक मौसमों के लिए कोई वर्षा नहीं होती थी तो इसके परिणामस्वरूप सूखा और जान–माल का भारी नुकसान हो जाता था। बारिश की कमी और निरंतर सूखा अकाल के प्राथमिक कारणों में थे। प्रारंभिक मध्यकालीन काल में पल्लव शासकों को ''कडुवेट्टी'' (जंगलों को साफ करने वाला) कहा जाता था। उन्होंने कृषि भूमि के विस्तार और मानव निवास के लिए वन भूमि के बड़े हिस्से को

साफ किया। राज सिंह के शासन के दौरान कुछ वर्षों तक वर्षा नहीं हुई जिससे कांचीपुरम में अकाल पड़ा। संभवतः यह वनों की कटाई के कारण हुआ था। आठवीं शताब्दी में पांड्य राज्य में भी ऐसी ही स्थिति थी जहां 12 साल से बारिश नहीं हुई थी। इससे निपटने के लिए पल्लव शासकों ने राहत के उपाय के रूप में *पंचवर वरियम* (एक स्थायी समिति) के माध्यम से फसल का भंडारण किया।

मानव तस्करी ऐसी प्राकृतिक आपदाओं का एक और दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम था। अंग्रेजी व्यापारी विलियम मेथवॉल्ड ने उल्लेख किया है कि 1630 के दशक में अकाल के कारण मसूलीपट्टनम में कई गरीब माता–पिता अपने बच्चों को बेचने के लिए मजबूर हो गए थे। वे ऐसा मुख्य रूप से पैसों के लिए नहीं बल्कि इस उम्मीद के साथ करते थे कि खरीदे गए उनके बच्चे उस प्रभावित क्षेत्र से भारत के विभिन्न क्षेत्रों में ले जाए जाएंगे जिससे उनकी जीवित रहने की संभावना प्रबल हो जाएगी।

हालांकि ऐसी प्राकृतिक आपदाएं कभी–कभी इंसानों को पर्यावरण की रक्षा करने के लिए भी मजबूर कर देती हैं। 1485 में मारवाड़ में भीषण सूखा पड़ने के कारण जम्भेश्वरजी ने बिश्नोई संप्रदाय की स्थापना की। उन्होंने ध्यान लगाया ओर पर्यावरण की रक्षा के महत्व को महसूस किया। तदनुसार, बिश्नोई प्रकृति की पूजा करने लगे। गुरू जम्भेश्वरजी ने अपने अनुयायियों के लिए 29 नियमों को निर्धारित किया जिसमें अधिकांश हरे पेड़ों को काटने और पशु वध पर प्रतिबंध लगाकर पर्यावरण के साथ सद्भाव बनाए रखने की बात करते हैं। उनके समकालीन जसनाथजी ने भी पर्यावरण के संरक्षण पर जोर दिया। बाद

में 1730 में खेजड़ली में अमृता देवी ने अन्य बिश्नोइयों के साथ खेजड़ी के पेड़ों की कटाई को रोकने के प्रयास में इन पेड़ों को गले लगाकर जो उनके लिए पवित्र थे अपने जीवन का बलिदान दे दिया। लगभग 363 बिश्नोइयों के सिर काट दिए गए।

इस तरह की घटनाओं से पारिस्थितिकी में भी बदलाव देखा गया है। 1341 में विनाशकारी बाढ़ के कारण पेरियार नदी में कोचीन बंदरगाह बन गया और क्रैंगनूर (Cranganur) बंदरगाह का महत्व कम हो गया। बाढ़ ने पोक्कली चावल को केरल के इडुक्की जिले से एड़िकंकारा और वर्तमान एर्नाकुलम, आलाप्पुड़ा और त्रिशूर जिलों के ज्वारीय आर्द्रभूमि तक फैला दिया। समय बीतने के साथ चावल की यह किस्म स्वयं को जीवित रखने के लिए लगभग 1.5 मीटर तक लंबे उगने लगे और इस तरह खारे मेड़ क्षेत्र में खुद को अनुकूलित कर लिया। इस प्रकार चावल की यह किस्म खारे पानी, समुद्री कटाव और अपक्षय बाढ़ में भी पनपने लगी।

पल्लव काल के दौरान महाबलीपुरम बंदरगाह को 320–560 तक और 950 में मिट्टी के कटाव के कारण तटीय बाढ का सामना करना पड़ा। चोल वंश 9वीं–11वीं सदी के साहित्यिक ग्रंथ और पुरातात्विक उत्खनन भी कावेरीपट्टिनम (पूमपुहार) के विनाश और समुद्री बाढ़ के बीच संबंध दर्शाते हैं। यह एक साथ व्यापार करते थे। जब 1292 में एक विनीशियन व्यापारी मार्को पोलो इस तट पर पहुचा तो उसने जहाज को केल नामक बंदरगाह पर लंगर डाला। यह बंदरगाह कावेरीपट्टिनम से लगभग 180 किलोमीटर दक्षिण में है। कावेरीपट्टिनम इस काल के दौरान समुद्र में डूबा हुआ था। मंदिर के शिलालेख भी तटीय

जलप्लावन के संबंध में जानकारी निकालने के लिए एक उपयोगी स्रोत हैं। इन मंदिर शिलालेखों का अध्ययन करने वाले नीलकंठ शास्त्री ने अपनी पुस्तक The Cholas (2000) में उल्लेख किया है कि 1112 में बापटला (आधुनिक आंध्र प्रदेश में) कुछ लवण क्यारियां नष्ट हो गई थीं। इरफ़ान हबीब की पुस्तक Man and Environment: The Ecological History of India गुजरात में बंदरगाहों पर और 17वीं सदी में समुद्र के किनारे परिवर्तन के प्रभाव पर प्रकाश डालती है। सूरत गुजरात के प्रमुख बंदरगाह के रूप में उभरा। इस प्रकार बाढ़ और सूखे के कारण मानव जीवन में कई परिवर्तन आए।

4.2.2 भूकंप

मध्यकालीन लेखकों ने भारत के विभिन्न हिस्सों जैसे गुजरात, असम, कश्मीर, दिल्ली क्षेत्र आदि में भूकंप की घटनाओं को दर्ज किया है। भूकंपों के परिणामस्वरूप आबादी, मानव बस्तियों व शहरों का विनाश तथा नदी प्रवाह व्यवस्था में परिवर्तन आदि देखने को मिलते थे। बाबर (1526–1530) ने अपने संस्मरण 'बाबरनामा' में 1505 में काबुल में आए भूकंप का उल्लेख किया है और इसके झटके उत्तर भारत में आगरा, ग्वालियर, मांडू आदि स्थानों पर भी महसूस किए गए थे। इस भूकंप की तीव्रता ऐसी थी कि अधिकांश मध्यकालीन स्रोतों में इस भूकंप का वर्णन मिलता है। यहां तक कि वृंदावन लाल वर्मा (1889–1969) द्वारा लिखित हिंदी उपन्यास 'मृगनयनी' में भी इसका उल्लेख है। मुगल काल के दौरान इतालवी यात्री निकोलाओ मनुची अपनी पुस्तक में लिखता है कि 1699 में गुजरात में एक उच्च तीव्रता के भूकंप के कारण वहां की नहरें, जो पानी की आपूर्ति करती थीं, लगभग सूख गई थीं और पानी में गंधक

(Sulphur) की मात्रा बढ़ गई थी। 1702 में यह क्षेत्र फिर से एक भयंकर भूकंप की चपेट में आया। नदियों में फिर से गंधक की मात्रा में वृद्धि देखी गई। बड़ी संख्या में मछलियां मर गईं। भारी मात्रा में गधक का उपभोग मानव के लिए उपयुक्त नहीं है क्योंकि इससे दस्त और निर्जलीकरण होता है।

4.2.3 भारी वर्षा और हिमपात

किसानों के लिए सबसे महत्वपूर्ण पर्यावरणीय कारक वर्षा थी। अच्छे उत्पादन के लिए इसका समय पर आगमन महत्वपूर्ण था। कैथलीन मॉरिसन ने 16वीं तथा 17वीं सदी के दौरान विजयनगर साम्राज्य के सीमांत क्षेत्रों में मानसून की बारिश के माध्यम से कृषि विस्तार पर प्रकाश डाला है। हालांकि भारी बारिश न केवल दिन–प्रतिदिन की गतिविधियों को रोका करती बल्कि कुछ गंभीर समस्याएं भी पैदा करती थी। मुगल सम्राट जहांगीर (1605–1627) अपने संस्मरण Tuzuk-i-Jahangiri में बताता है कि जब वह बरसात के मौसम में मांडू का दौरा कर रहा था तब उसके शाही जुलूस को समस्याओं का सामना करना पड़ा और वह इस तरह के खराब मौसम में शिकार करने के लिए नहीं जा सकता था। मांडू में इस दौरान अत्यधिक बारिश, गरज और बिजली गिरने से 20 निवासियों की मौत हो गई तथा कई घर ढह गए। घुड़सवार सेना पर निर्भर रहने वाले मुगलों को बंगाल और असम की आर्द्र भूमि की ओर बढ़ते हुए हाथियों की ओर रूख करना पड़ा। बंगाल की विजय के बाद मुगल क्षेत्र में बंगाल का एकीकरण सुचारू नहीं था। बंगाल की राजधानी को वापस गौर में स्थानांतरित कर दिया गया, जो एक प्राचीन शहर था जहां गंगा नदी ने अपना मार्ग बदल दिया था, जिससे नदी के पूर्व में तेजी से बहने वाली नहरें स्थिर

मेड़ में बदल गईं। यह 1575 के विनाशकारी प्लेग का कारण बना जब कई मुगल अधिकारी, सैनिक और नागरिक मारे गए। कई लोगों ने क्षेत्र छोड़ दिया। इसके अलावा, लगातार भारी वर्षा कभी–कभी नदी के स्तर को बढ़ा देती जिसके परिणामस्वरूप बाढ़ आ जाया करती थी। इसी तरह भारी बर्फबारी भी कई मुश्किलें खड़ी कर देती। बल्ख और कधार में मुगल सैन्य अभियान कई बार कठोर सर्दियों और भारी बर्फबारी और ओलावृष्टि से बाधित हुए। अर्थात कहने का तात्पर्य यह है कि प्राकृतिक आपदाएं मध्यकालीन भारत की आवर्ती घटनाएं थीं और सीधे तौर पर मानव समाज पर प्रभाव डालती थीं। लेकिन मानव तथा पयावरण के संबंध की जांच करते समय मानवीय कार्यों को भी नज़रअंदाज नहीं किया जा सकता। निम्नलिखित अनुभाग में आप देखेंगे कि मानव प्रयासों ने प्राकृतिक दुनिया को कैसे प्रभावित किया।

4.3 वनस्पति और जीव

प्राचीन काल में मानव मुख्य रूप से वनस्पतियों और जीवों के खिलाफ़ संघर्ष करता था। एक बार जब इन्हें पालतू बना लिया गया और नियंत्रण में लाया गया तब मानव प्रयासों को इन्हें गुणा करने की दिशा में निर्देशित किया गया। मध्यकालीन युग में जो ''टिब्ब–ए–यूनानी'' (यूनानी चिकित्सा) पर विभिन्न किताबें लिखी गईं वे देशी पौधों की जानकारी एकत्र करने के लिए बहुत ही उपयोगी हैं। इन ग्रंथों ने औषधीय पौधों और जड़ी–बूटियों के बारे में जानकारी दी। निम्नलिखित कुछ महत्वपूर्ण चिकित्सा ग्रंथों का उल्लेख हैः

- ''मजमा–ए–सियाई'' (मुहम्मद बिन तुगलक के काल में लिखी गई),
- ''राहत–अल–इंसां'' और ''तिब्ब–ए–फ़िरोज़–शाही'' (फ़िरोज़ शाह तुगलक के समय में रचित),
- मियां भुवा की ''तिब्ब–ए–सिकंदरी'' (सिकंदर लोदी को समर्पित),
- ''शिफ़ा–ए–महमुदी'' (गुजरात के सुल्तान और अहमद शाह प्रथम के पोते महमूद शाह के आदेश पर वाग्भट द्वारा 'अष्टांग हृदय' का अनुवादित ग्रंथ)।

'मृगपक्षी–शास्त्र' पौधों और जानवरों पर एक और महत्वपूर्ण समकालीन स्रोत है। इसकी रचना जिनापुर के राजा शौददेव के शासनकाल में 13वीं सदी में हंसदेव के द्वारा हुई थी। राजा ने इस अनूठी रचना को लिखने का आदेश इसलिए दिया क्योंकि एक बार अपने एक शिकार अभियान से लौटने के बाद उसने शिकार के माध्यम से जानवरों तथा पक्षियों के बारे में जानकारी एकत्र करने की आवश्यकता महसूस की। मुगल सम्राट बाबर और जहांगीर के संस्मरणों से मुगल साम्राज्य के वनस्पतियों और जीवों का बहुत उपयोगी विवरण मिलता है। अगले खंड में आप देखेंगे कि मनुष्य ने जानवरों और पौधों की एक विस्तृत श्रृंखला पर कैसे नियंत्रण किया।

4.3.1 विदेशी जानवरों और पौधों का आदान–प्रदान

विदेशी जानवरों और पौधों के बारे में राजाओं और अभिजात वर्ग में बहुत उत्सुकता होती थी। इनका वर्णन शाही इतिहास और यात्रा वृत्तांतों में किया गया है। कुशल चित्रकारों द्वारा वे चित्रित किए जाते थे। वे राजनयिक उपहार के रूप में भी भेजे जाते थे। इस तरह के राजनयिक उपहार संबंधों को बढ़ावा

देने और विशाल प्राकृतिक संसाधनों पर शासक की शक्ति और नियंत्रण का प्रदर्शन करने का एक साधन थे। 16वीं सदी में बने कोणार्क सूर्य मंदिर की दीवार पर अफ्रीका के एक जिराफ़ का चित्रण है। जहांगीर विदेशी वनस्पतियों तथा जीवों के चित्रों को बनाने का आदेश अक्सर दिया करता था। उसने जानवरों का एक विशाल संग्रह बना रखा था जिसमें 100 शेर, 400 चीते, 6000 तुर्की घोड़े, 1200 हाथी और 2000 ऊंटों के साथ–साथ ज़ेबरा, डोडो और जिराफ़ जैसे दुर्लभ जानवर शामिल थे। जहाँगीर ने राजनयिक दूतकर्मों के आदान–प्रदान के माध्यम गोवा में मुकर्रब खान जैसे अपने सेनापतियों तथा अधिकारियों को कोई भी दुर्लभ पशु लाने का निर्देश देकर ऐसे कई असामान्य जानवरों को प्राप्त किया। उसके सेनाध्यक्षों में से एक मीर ज़ाफर ने उसे एक ज़ेबरा उपहार में दिया था जो मीर ज़ाफर ने इथियोपिया से भारत आने वाले कुछ तुर्कों से खरीदा था। जहांगीर ने बाद में 1621 में सफ़ाविद राजा शाह अब्बास को यह जानवर उपहार में दे दिया। इससे पहले 1619 में शाह अब्बास ने जहांगीर के दरबार में जाइरफाल्कन भेजा था।

भारत में पाए जाने वाले जानवर जैसे हाथी, गैंडा आदि यूरोप को भी राजनयिक उपहार के रूप में भेजे गए थे। 1577 में पुर्तगाल के राजा सेबेस्टियन प्रथम (1557–1578) को उपहार के रूप में एक मादा गैंडा भेजा गया था जो संभवतः पुर्तगाली भारत के राजप्रतिनिधि (viceroy) की ओर से था। भारत से भेजी गई क्लारा नाम की एक और मादा गैंडे ने 1740 और 1750 के दशक में यूरोप का दौरा किया। वह रोकोको चित्रकारी द्वारा चित्रित विषयों में से एक बन गई। वर्साय में फ्रांस के बॉर्बन शासक लुई XV

(1715–1774) ने भी उसका स्वागत किया जहां वह कुछ समय तक रही। लुई XV ने उसका चित्र बनवाया।

जहांगीर ने दरबारी चित्रकार उत्साद मंसूर, जो प्रकृति अध्ययन के विशेषज्ञ थे, को कई मौकों पर ऐसे विषयों पर चित्रकारी करने के लिए नियुक्त किया गया। तदनुसार, उसने एक टर्की (मुगलों के लिए यह पक्षी अज्ञात था), ज़ेबरा, डोडो, यूरेशियन लाल गिलहरी आदि को चित्रित किया। उसके द्वारा डोडो के चित्र को अब तक इस विलुप्त पक्षी का सबसे सटीक प्रतिनिधित्व माना जाता है। वह वनस्पतियों और जीवों को उस परिदृश्य में चित्रित करता था जिसमें वे पाए जाते थे। 1610 में 'चिनार के पेड़ पर यूरेशियन लाल गिलहरी'' शीर्षक वाले चित्र में परिदृश्य को कई भारतीय पक्षियों और जानवरों के साथ चित्रित किया गया है जैसेः

- यूरेशियन कॉलर वाला कबूतर,
- रेड–वॉटल्ड लैपविंग (इंग्लैंड का एक प्रकार का कबूतर के कद का पक्षी),
- डेमोइसेल सारस (यह एक प्रवासी पक्षी है जो आज तक सर्दियों में उत्तर भारत का दौरा करता है),
- कलिज तीतर,
- लद्दाखी यूरियाल (एक प्रकार की भेड़),
- चुकर तीतर।

व्यापार और राजनयिक आदान–प्रदान के द्वारा मुगलों ने मध्य पूर्व और फारस में पाए जाने वाले पौधों को हिन्दुस्तान में भी उगाना शुरू कर दिया। साथ ही साथ, खोज यात्राओं के फलस्वरूप महा अमेरिका की खोज हुई जिससे विश्वव्यापी व्यापार को प्रोत्साहन मिला। यहाँ पाए जाने वाले फलों और सब्जियों को हिन्दुस्तान में भी पुर्तगालियों द्वारा लाया गया। गोवा के जेसुइट्स ने 16वीं सदी के मध्य में आम को कलम करने की व्यवस्थित तकनीक की शुरुआत की। मुगलों ने इस पद्धति का उपयोग करते हुए आम की विभिन्न किस्मों का विस्तार किया। दरभंगा के पास अकबर (1556–1605) ने ''लाख बाग'' बनवाया जो 1,00,000 आम के पेड़ों का एक बड़ा बाग था। अकबर के शासनकाल के दौरान अली कुली अफ़शर नामक नियंत्रक ने संशोधन (grafting) द्वारा कश्मीर में मीठी चेरी की शुरुआत की। जहाँगीर ने अनानास की खेती शुरू की जो अमरीका से गोवा में लाया गया था। यूरोपीय व्यापारियों द्वारा अमेरिका से तम्बाकू, मिर्च, आलू, शरीफा, अनानास, काजू तथा अमरूद लगाए गए। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि औद्योगिक क्रांति (जो पहली बार यूरोप में हुई थी) और औपनिवेशिक विस्तार के बाद 'पारिस्थितिक साम्राज्यवाद' के परिणाम के रूप में हमने जिस तरह की एकरूपता देखी वह इन घटनाओं से पहले स्पष्ट नहीं थी। इस समय की पारिस्थितिकी तुलनात्मक रूप से बहुत विविध थी और इस तरह की विविधता को बहुत उत्सुकता से देखा जाता था और शासक वर्ग इस विविधता से बहुत आकर्षित थे और इसमें बहुत रूचि लेते थे।

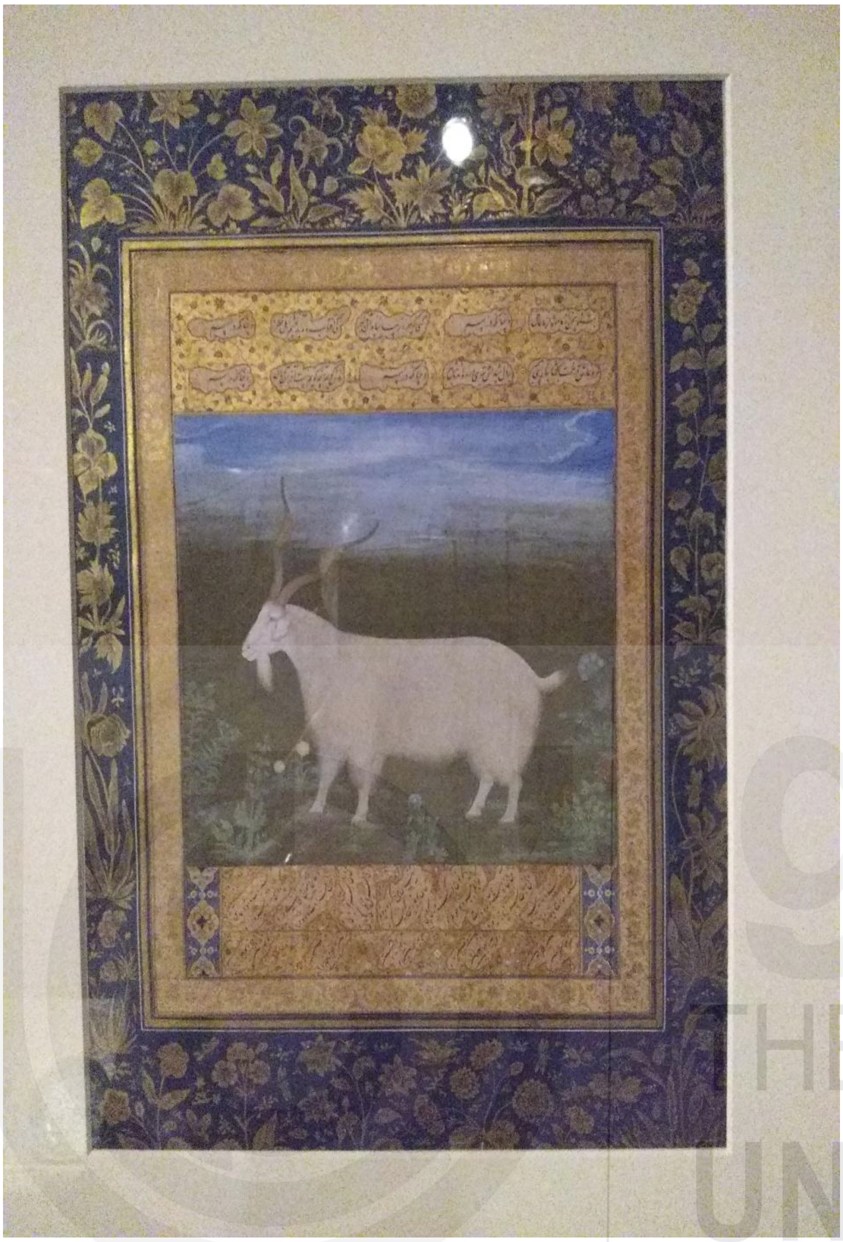

लद्दाखी पर्वतों में पाई जाने वाली बकरी। आर्ट इंस्टीट्यूट ऑफ़ शिकागो। स्रोतः डॉ. ऋचा सिंह।

4.3.2 शिकार ओर बंदी जानवर

मुगल बादशाहों के शिकार अभियानों का अध्ययन उनके द्वारा शिकार किए गए जानवरों के वितरण के संबंध में जानकारी प्राप्त करने में उपयोगी है। शिकार के विभिन्न तकनीकें और तरीके थे। ''कमरगाह'' के शिकार के माध्यम से शाकाहारी (गज़ेल, मृग, हिरण, पैट्रिज, नीलगाय आदि) और सर्वाहारी पक्षियों

को घेर लिया जाता था और फिर शिकार के लिए एक बड़े ''कमरगाह'' में छोड़ दिया जाता था। 1585 से 1617 तक जहांगीर ने 28,352 जानवरों का शिकार किया था जिनमें से 17,167 बंदूक से मारे गए थे। शासकों ने जंगली जानवरों जैसे स्याहगोश और चीता का इस्तेमाल अन्य जानवरों का शिकार करने के लिए किया। फ़िरोज़ शाह तुगलक के पास बड़ी संख्या में स्याहगोश थे जो अब भारत में गंभीर रूप से लुप्तप्राय प्रजातियों की सूची में शामिल हैं। मध्ययुगीन काल में दिल्ली सुल्तानों और मुगलों के फारसी गथों जैसे ''तूतिनामा'', ''अनवार–ए–सुहैली'', ''खमसा–ए–निज़ामी'' और ''शाहनामा'' में ''स्याहगोश'' का उल्लेख मिलता है। उन्हें ''स्याहगोश'' इसलिए कहा गया क्योंकि फारसी में स्याह का मतलब काला और गूश का मतलब कान होता है। और स्याहगोश के काले कानों के कारण उसका यह नाम रखा गया। फ़िरोज़ शाह तुगलक के पास स्याहगोश के लिए एक अलग से अस्तबल था जिसे ''सियाह–गोशदार खाना'' कहा जाता था। अकबर के पास 1000 चीतों का संग्रह था। चीते शायद ही कैद में प्रजनन करते थे। हालांकि 1613 में जहांगीर ने कैद में चीतो के प्रजनन का एक उदाहरण दर्ज किया जब चीनी नाम की एक मादा चीता ने तीन शावकों को जन्म दिया। 1956 से पहले तक का यह एकमात्र लिखित उदाहरण है जिसमें हमें बंदी चीतों के प्रजनन का पता चलता है। 1956 में पहली बार प्राणी विज्ञान सुविधाओं के अंतर्गत फ़िलाडेल्फ़िया चिड़ियाघर ने सफलतापूर्वक एक चीते के जोड़े का प्रजनन करवाया। तब से वे प्राणी विज्ञान सुविधाओं में पैदा होने लगे। जहांगीर ने एक अल्बिनो चीता का भी आपने संस्मरण में उल्लेख किया है जो उसे ओरछा के शासक राजा बीर सिंह देव द्वारा उपहार में दिया गया था। शाही शिकार ने वन्यजीव प्रजातियों

के वितरण को प्रभावित किया था और मुगलों के काल में विशेष रूप से चीतों के वितरण पर असर डाला था। मुगल सम्राटों द्वारा उनकी मांग और बंदी ने उनकी आबादी पर भारी असर डाला। बड़ी संख्या में उन्हें उनके प्राकृतिक आवासों से अलग कर बंदी बनाया गया ताकि वे अन्य जानवरों के शिकार में सहायक बनें। और ऐसा दुर्भाग्यपूर्ण 20वीं सदी तक जारी रहा जब तक वे भारत में लगभग विलुप्त नहीं हो गए।

दिल्ली सल्तनत काल के दौरान सुल्तान और उसके अधिकारियों ने शेरों का शिकार करने का आनंद लिया। लेकिन शेर का शिकार करना मुगलों के अधीन एक शाही विशेषाधिकार था। इससे वह मध्यकालीन युग में पूरी तरह से विलुप्त होने से बच गए। जहांगीर ने जहांगीरपुर में हिरणों के शिकार पर रोक लगा दी। उसने जानवरों के प्रजनन और संकरण पर प्रयोगों को भी प्रोत्साहित किया। उसने दो भिन्न जाति के नर एवं मादा के लैंगिक संसर्ग के फलस्वरूप जीव के उत्पन्न होने की पद्धति में भी रुचि ली। उसके पिता अकबर ने हाथियों और घोड़ों सहित पालतू जानवरों की अच्छी नस्लें पैदा करने में गहरी दिलचस्पी ली।

जंगलों में और सम्राटों के आरक्षित शिकार के मैदानों में शाही शिकार के अलावा ऐसे भी उदाहरण हैं जो बताते हैं कि कभी–कभी जब जंगली जानवर खेती की भूमि में प्रवेश करते थे तो उन्हें निवासियों द्वारा मार दिया जाता था। अबुल फ़ज़ल लिखता है कि तिनहुत में जो बिहार का मुगल सूबा था, बारिश के मौसम में खेती की गई भूमि पर हिरण, चिकारे और बाघ आते थे और

स्थानीय लोगों द्वारा उनका शिकार किया जाता था। इससे हमें इस काल के मानव और वन्यजीवों के बीच के संघर्ष का पता चलता है।

इस प्रकार शासकों ने जंगली जानवरों को पकड़कर और उन्हें बदी बना कर या उनका शिकार करके अपनी शक्ति का प्रदर्शन किया। जानवरों के प्रजनन को प्रोत्साहित करने के लिए सम्राटों द्वारा प्रयास किए गए। हालांकि जो कैद में प्रजनन नहीं कर सके उनकी संख्या में भारी गिरावट आई क्योंकि उनकी आबादी तेज दर से बढ़ ना सकी। इसके अलावा शिकार को राजा अपने अधिकारियों और सैनिकों के सैन्य कौशल के साधन के रूप में भी देखता था।

4.3.3 पशु और गतिशीलता

मध्यकालीन राज्य युद्ध, शिकार तथा भारी भार ढोने के लिए और साथ ही साथ दूतों को तेज रफ्तार से संदेश पहुँचाने के लिए जानवरों पर बहुत ही ज़्यादा आश्रित थे। घुड़सवार सेना दिल्ली सल्तनत और मुगल सेनाओं की रीढ़ थी। अकबर के समय में घुड़सवार सेना में लगभग 12,000 घोड़े शामिल थे लेकिन चरागाहों की कमी और यहाँ पाई जाने वाली कई घासों की खराब गुणवत्ता के कारण उनका रखरखाव एक चुनौती था। मुगलों के अधिकांश घोड़े मध्य एशिया और फारस से और कुछ अरब से लाए जाते थे। कुछ भारत में भी पाए जाते थे। मनसबदारों को भी लगभग 26,000 घोड़ों की आरक्षित सेना रखनी पड़ती थी। मुगलों की तरह विजयनगर साम्राज्य में पाए जाने वाले सबस अच्छे घोड़े मुख्य रूप से फारस से आयात किए जाते थे। कृष्णदेव राय के शासनकाल के दौरान साम्राज्य का दौरा करने वाले एक पुर्तगाली यात्री दुआर्ते बरबोसा अपनी पुस्तक में लिखता है कि चूंकि ये घोड़े साम्राज्य के जलवायु में नहीं पाए जाते

थे बल्कि विदेश से लाए जाते थे इसलिए वे इस जगह की जलवायु के अभ्यस्त नहीं थे और वे लंबे समय तक जीवित नहीं रह पाते थे। इस कारण उनकी बहुत अच्छी देखभाल की जाती थी।

मुगल छावनी में भी भारी संख्या में जानवरों को इस्तेमाल में लाया जाता था। 17वीं सदी का फ्रांसीसी चिकित्सक फ़्रांसिस बर्नियर कश्मीर की ओर बढ़ रहे औररंगज़ेब की छावनी के बारे में वर्णन करते हुए अनुमान लगाता है कि इसमें लगभग 150,000 जानवर (युद्ध के घोड़े और बोझा ढोने वाले जानवर) थे। इनमें 50,000 ऊँट थे। गतिशीलता के लिए जानवरों पर इतनी बड़ी निर्भरता का मतलब यह भी था कि इन जानवरों की अच्छी देखभाल और रखरखाव की आवश्यकता पड़ती थी। कुछ फारसी ग्रंथों में उनके आहार और रख–रखाव पर प्रकाश डाला गया है। उदारहण के लिए:

- आनंद राम मुखलिस द्वारा लिखित 'राहत–अल–फ़रास (घोड़ों और उनके उपचार पर),
- वलिह मुसावी द्वारा ''कबूतरनामा'' (कबूतरों और उनकी देखभाल और प्रजनन पर),
- अबुल फ़ज़ल की ''आइन–ए–अकबरी'' भी शाही जानवरों को प्रदान किए जाने वाले आहार और देखभाल के बारे में जानकारी देती है।

गंगा और सिंधु घाटियों के बीच स्थित दिल्ली सल्तनत एक बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान में थी। इसकी ताकत इसके सुल्तानों की घोड़ों के पूर्व की ओर प्रवाह और हाथियों के पश्चिम की ओर प्रवाह को नियंत्रित करने की क्षमता पर निर्भर थी। मुगल शाही इतिवृत और यूरोपीय यात्रा वृतांत हाथियों के बारे में महत्वपूर्ण

जानकारी प्रदान करते हैं। काटिल्य की ''अर्थशास्त्र'' से हमें पता चलता है कि प्राचीन भारत के मौर्य काल में आठ जंगल ऐसे थे जहाँ हाथियों की आबादी बहुताय थी। मुगल काल के समय हाथी सिंधु घाटी और ऊपरी दक्कन में अब नहीं पाए जाने लगे जबकि वे मौर्य काल के दौरान वहाँ पाए जाते थे। हालांकि युद्ध के लिए पकड़े जाने के बावजूद जंगली हाथियों की संख्या में ज़्यादा कमी नहीं आई। औपनिवेशिक काल (लगभग 1800 के बाद से) से उनके प्राकृतिक वासों के विनाश के कारण उनकी संख्या में काफ़ी गिरावट आई। दुआर्ते बरबोसा और अब्दुर रजाक (फारसी राजदूत) के अनुसार विजयनगर के शासक सीलोन (श्रीलंका) से हाथियों का आयात करते थे। यह दिलचस्प है कि वे ऐसा करते थे क्योंकि हाथी भारत के देशी जानवर है। ''आइन–ए–अकबरी'' में उन स्थानों का उल्लेख है जहाँ से मुगल शासक हाथियों को प्राप्त करते थे पर अबुल फ़ज़ल ने कही भी सीलोन का उल्लेख नहीं किया है। शायद विजयनगर के शासक इसलिए सीलोन से हाथियों का आयात करते थे क्योंकि भारत के मध्य क्षेत्रों पर बहमनी राजाओं का और बाद में बहमनी साम्राज्य से स्वतंत्र हुए पाँच राज्यों का नियंत्रण था और यहां हाथी पाए जाते थे। इस कारण विजयनगर के शासक यहां से हाथी नहीं प्राप्त कर सकते थे। ऐसा प्रतीत होता है कि विजयनगर साम्राज्य में ऊंटों का भी उपयोग किया जाता था परन्तु इनका उपयोग शक्तिशाली और अमीर व्यक्तियों द्वारा ही किया जाता होगा। इस तरह मध्ययुगीन राज्य जानवरों की खरीद और रखरखाव पर बहुत ध्यान देते थे और इनका उपयोग वे कई उद्देश्यों के लिए करते थे।

4.3.4 पशु और भोजन

इस काल में पशुओं के मांस की एक विस्तृत श्रृंखला उपभोग के लिए उपलब्ध थी। पश्चिमी चालुक्य वंश के बारहवीं शताब्दी के राजा सोमेश्वर तृतीय द्वारा संस्कृत मे लिखित ''मानसोल्लास'' (मानस + उल्लास = मन का उल्लास), जिसमें राजा के 200 विनोदों का वर्णन है, में कुछ मांस–आधारित यौन इच्छा को बढ़ाने के लिए कामोत्तेजक खाद्‌य का विवरण है। सोमेश्वर तृतीय को तला हुआ कछुआ, भुना हुआ काला चूहा (मैगा) आदि खाना बहुत पसंद था। डोमिंगो पेस (पुर्तगाली यात्री) के अनुसार विजयनगर साम्राज्य में भिन्न–भिन्न प्रकार के जंगली और घरेलू पक्षी और जंगली जानवर (जिनका शिकार पशु उत्पादन के लिए किया जाता था) बहुत सस्ते दाम पर बाज़ारों में जिंदा बेचे जाते थे। लोग गाय और बैलों को छोड़कर किसी भी जानवर और पक्षी का मांस खाने के लिए स्वतंत्र थे। हिरन, बकरे और सूअर का मांस, गौरैया, चूहे, बिल्लियाँ और छिपकली भी बाज़ारों में मिलते थे।

वहीं दूसरी ओर अकबर ने गौमांस का त्याग कर गोहत्या पर रोक लगा दी थी। वह सप्ताह में दो बार (शक्रवार और रविवार को) मांस खाने से परहेज करता था। साथ में ''दीन–ए–इलाही'' के सदस्यों को भी मांस से परहेज करने के लिए निर्देशित किया गया था। अकबर ने साल में 100 दिन मांस खाने की मनाही की और कुछ पवित्र दिनों में सभी मांस की बिक्री पर रोक लगा दी। अबुल फ़ज़ल का कहना है कि मुगल बादशाह अकबर को मांस के प्रति अरुचि हो गई थी और वह लगभग शाकाहारी हो गया था। जहाँगीर गुरूवार और रविवार को मांस नहीं खाता था। हालांकि जब वह शिकार अभियानों के लिए जाता तो वह कभी–कभी जंगली जानवरों को मार डालता और उनका मांस

गरीबों में बाँट देता। इस प्रकार राजाओं ने अपनी प्रजा से प्राकृतिक संसाधनों के माध्यम से संबंध स्थापित करने का प्रयास किया। कभी वे उन्हें प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करने की अनुमति देते तो कभी उनकी पहुँच इन संसाधनों तक सीमित कर देते तथा उनके आदेशों का पालन नहीं करने पर उन्हें दण्डित करते।

बोध प्रश्न 1

1) मध्ययुगीन काल के दौरान प्राकृतिक आपदाओं ने मानव–पर्यावरण संबंध को कैसे प्रभावित किया?

....

....

....

....

....

....

2) उल्लेख कीजिए कि मध्यकालीन राज्य किस तरह से पशु संसाधनों पर बहुत अधिक निर्भर थे और उन्हें कैसे प्राप्त किया जाता था?

....

....

....

....

....

....

3) सही या गलत बताएंः

क) ''तिब्ब–ए–सिकंदरी'' वाघभट्ट द्वारा लिखित अष्टांग हृदय की अनुवादित कृति है।

(.........)

ख) उस्ताद मंसूर, जिसे ''नादिर–उल–अस्र'' की उपाधि जहाँगीर द्वारा दी गई थी, ने कई पौधों और जानवरों को चित्रित किया जो हमें मुगल काल के दौरान वनस्पतियों और जीवों के बारे में बहुमूल्य जानकारी प्रदान करते हैं।

(.......)

ग) मुगलों द्वारा पकड़े गए चीतों को अक्सर कैद में रखा जाता था। इसके फलस्वरूप उनकी संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई।

(........)

घ) आनंद राम मुख़लिस द्वारा लिखित ''राहत–अल–फ़रास'' एक फारसी ग्रंथ है जो घोड़ों और उनके रखरखाव से संबंधित है।

(........)

4.4 प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग

प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग और दोहन ने भौतिक परिदृश्य को बदल दिया और ऐतिहासिक प्रक्रियाओं को प्रभावित किया। सिंचाई के कृत्रिम साधनों ने कृषि भूमि के विस्तार में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। सिंचाई परियोजनाओं ने फ़िरोज़ शाह तुगलक (1325–1351) को अकाल के मुद्दे से निपटने में सक्षम बनाया जो मुहम्मद बिन तुगलक (1325–1351) के शासनकाल के दौरान प्रमुख चिंताओं में से एक था। सिंचाई के कृत्रिम साधनों ने कुछ क्षेत्रों में खरीफ फसलों के अलावा रबी फलसों की खेती में भी सहायता प्रदान की। जैसे–जैसे उत्पादन बढ़ता गया वस्तुओं के दाम कम होते गए। आगे आप पानी और भूमि जैसे प्राकृतिक संसाधनों के दोहन के लिए मानव प्रयासों के बारे में पढ़ेंगे।

4.4.1 जल प्रबंधन

भारत में तुगलकों ने नहर सिंचाई की शुरुआत की थी। ''तारीख–ए–फ़िरोज़शाही'' में जियाउद्दीन बरनी हमें बताता है कि गयासुद्दीन तुगलक नहरों का निर्माण करने वाला पहला शासक था। फ़िरोज़ शाह तुगलक ने बड़े पैमाने पर नहरों का निर्माण कराया। उसने रजबवाह और उलुग खानी नहरों का निर्माण किया जो यमुना नदी से हिसार क्षेत्र तक पानी पहुंचाते थे। दूसरी नहर जो उसने बनवाई थी वह सतलुज से पानी लाती थी। इन सब के अलावा एक और दूसरी नहर घग्गर से पानी की आपूर्ति करती थी। उसने एक नहर ऐसी भी बनवाई जो दिल्ली के पास काली नदी को यमुना नदी में शामिल

करती थी। नहरों के निर्माण से पहले हिसार–ए–फ़िरोज़ा[1] जैसे स्थान शुष्क क्षेत्र थे और यहां पानी की गंभीर समस्या थी। सिराज उस अफ़िफ़ के अनुसार नहरों के आने के कारण हिसार में रबी और खरीफ दोनों फसलों को उगाया जाने लगा। शाहजहाँ (1628–1658) को भी नहरें बनाने के लिए जाना जाता है। उसने ''नहर–ए बिहिश्त'' का निर्माण करवाया और दोआब की सिंचाई के लिए पश्चिम यमुना नहर में और सुधार किया। उसने ''दीघियों'' का भी निर्माण करवाया जो प्रवेश करने के लिए सीढ़ियों के साथ वर्गाकार या गोलोकार जलाशय थे।

मुगलों को जटिल जल संसाधन प्रबंधन प्रणाली के लिए जाना जाता था। उन्होंने अपने साम्राज्य के विभिन्न हिस्सों में ''क़नातों'' या ''कारीज़ों'' का निर्माण किया। ''क़नात'' एक अरबी शब्द है और ''कारीज़'' फ़ारसी शब्द है। इसका आविष्कार फारस (आधुनिक ईरान) में हुआ था। क़नात बनाने के लिए पहाड़ियों या किसी भी अच्छी ऊँचाई वाले क्षेत्र में ज़मीन के नीचे नाला निकालकर और उसे किसी निचले क्षेत्र में ले जाकर सुरंग से पानी को एक खुले टाँका (tank) में बहा दिया जाता था। गुरूत्वाकर्षण के प्रभाव के कारण स्वयं ही पानी ऊँचे क्षेत्र से निचले क्षेत्र की ओर बहता रहता था। हालांकि क़नात आज के समय में भारत में अवसादन, पेड़ों की कटाई, औद्योगिक कचरे

[1] हिसार (حسار) एक अरबी शब्द है जिसका मतलब किला होता है। ''हिसार–ए–फ़िरोज़ा'' का शाब्दिक अर्थ फ़रोज का किला है।

द्वारा भूजल के दूषित होने आदि के कारण अनुपयोगी हो गए हैं। क़नात के अलावा ''नोरिया'' और ''साकिया'' जल उठाने के लिए उपकरण थे।

बावड़ियों को शुष्क या अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में पानी के संरक्षण के लिए बनवाया जाता था। ऐसी जलवायु में गर्मी से बचन के लिए भी निवासियों के लिए ये लाभदायक थीं क्योंकि हवा सतह की तुलना में इन बावड़ियों के तल पर ठंडी रहती है। ''चांद बावली'' (जयपुर के पास) राजस्थान की बावड़ियों में एक उल्लेखनीय उदाहरण है। अन्हिलवाड़ा (पाटन) में ''रानी की वाव'' नामक बावड़ी गुजरात के सोलंकी या चालुक्य वंश की रानी द्वारा बनवाया गया था। दिल्ली में ''राजा की बावली'', ''गंधक की बावली'', ''हज़रत निज़ामुद्दीन बावली'', ''अग्रसेन की बावली'', ''लाल किला बावली'' आदि का निर्माण कराया गया। अनासागर झील (अजमेर), पिछोला और कटेहसागर झीलों (उदयपुर) जैसी कृत्रिम झीलों का निर्माण राजस्थान में सूखे और अकाल के आवर्ती मुद्दों से निपटने के लिए किया गया था। इसी तरह दिल्ली में इल्तुतमिश ने ''हौज़–ए–शम्सी'' की खुदाई करवाई और आलाउद्दीन खिलजी ने ''हौज़–ए–अलाई'' का निर्माण कराया। हरियाणा में अनंगपुर बांध के रूप में आठवीं शताब्दी में राजा अनंगपाल द्वारा पत्थर से निर्मित बांध का निर्माण किया गया था।

दक्षिण भारत में प्रारंभिक राजवंश मुख्य रूप से नदी के दहाने में केंद्रित थे जैसे चोल कावेरी दहाने में स्थित थे, वैगई दहाने में पाण्डय और कृष्णा में वेंगो के चालुक्य थे। 12वीं–13वीं शताब्दी तक नदी के दहाना क्षेत्र अंतर्देशीय क्षेत्रों में स्थानांतरित हो गए। बड़े पैमाने पर टाँकाएं (tanks) बनाए गए। राजेंद्र चोल

(1014–1044) ने एक विशाल सरोवर का निर्माण किया जो उसकी राजधानी गंगईकोडचोलपुरम में स्थित था। इस सरोवर का नाम ''चोलगंगम'' था। परंतक चोल (907–955) ने वीरानामेरी झील (आधुनिक दक्षिण आर्कोट में) का निर्माण किया। डोमिंगो पेस ने विजयनगर में कृष्णदेव राय द्वारा निर्मित एक बड़ा तालाब देखा था जिसमें देवताओं को प्रसन्न करने के लिए कई कैदियों की बलि दी गई थी। अतः विभिन्न जल प्रबंधन और संरक्षण प्रौद्योगिकियों की सहायता से जल, जो सभी जीवन का स्रोत है, को शुष्क क्षेत्रों में और पहाड़ी क्षेत्रों से भी उपयोग में लाया गया जिस कारण से जनसंख्या और खेती फली–फूली।

4.4.2 भूमि

समृद्ध उपजाऊ भूमि राज्यों के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण थी और उसे नियंत्रित करने के लिए लड़ाइयाँ भी लड़ी गईं। जबकि ब्रिटिश औपनिवेशिक युग की तरह मध्यकालीन युग में भी जंगलों को एक बाधा के रूप में देखा जाता था। घने जंगलों को लुटेरों, विद्रोहियों और जंगली जानवरों की शरणस्थली के रूप में देखा जाता था। लेकिन जंगल को काटना एक कठिन काम था। बलबन ने दोआब में जंगलों को काटा और किले का निर्माण किया ताकि इस क्षेत्र में मेवाती राजपूतों की लूट को रोका जा सके। यद्यपि वनों का उपयोग व्यापार के लिए जड़ी–बूटियों, लकड़ी, गोंद, कंद, रंग, जलाऊ लकड़ी आदि के निष्कर्षण के लिए किया जाता था लेकिन वन उपज का यह निष्कर्षण छोटे पैमाने पर था क्योंकि जंगलों का एक बड़ा हिस्सा सुलभ नहीं था। जंगल उन लोगों के लिए भी निर्वाह का साधन था जो खाद्य–संग्रह अर्थव्यवस्था पर निर्भर थे। मालाबार

के जंगल मसाले प्राप्त करने के लिए एक समृद्ध स्रोत थे और मसाला व्यापार मालाबार तट पर स्थित राज्यों के लिए राज्य के राजस्व का एक महत्वपूर्ण स्रोत था और ये राज्य अरबों के साथ व्यापार में संलग्न थे। अरब का बेड़ा मालाबार से सागौन की लकड़ी से बनाया जाता था। जब 1498 म पुर्तगाली नाविक वास्को डि गामा कालीकट (आधुनिक कोझिकोड) में उतरा तो पुर्तगालियों को मालाबार तट पर अपने वाणिज्यिक प्रतिद्वंदी अरब व्यापारियों का सामना करना पड़ा। जिन तरीकों से पुर्तगालियों ने हिंद महासागर के व्यापार को नियंत्रित करने की कोशिश की उन तरोकों में से एक मालाबार में जहाज़ निर्माण केंद्रों पर नियंत्रण हासिल करना भी शामिल था। अरब के रेगिस्तानी क्षेत्रों में लकड़ी की कमी के कारण अरब व्यापारी तेज़ी से जहाज़ निर्माण का कार्य ना करा सके। और इसलिए वे जहाज़ निर्माण में पुर्तगालियों के प्रतिस्पर्धा करने से चुक गए। बाद में, अंग्रेजों ने भी जहाज़ निर्माण के लिए सागौन के महत्व को पहचाना और जंगलों के व्यावसायिक दोहन को और तेज़ किया गया। इंग्लैंड के बलूत (Oak) के पेड़ों की तुलना में भारतीय सागौन के पेड़ जहाज़ निर्माण के लिए अधिक उपयुक्त थे। एक बिटिश व्यापारी अपनी सूरत यात्रा पर लवजी नसरवांजी वाडिया नामक एक पारसी जहाज़ बनाने वाले से मिला और उसे जहाज़ निर्माण में अंग्रेजों की सहायता के लिए बॉम्बे सूबे (presidency) आने के लिए आमंत्रित किया। सन 1821 में बॉम्बे गोदी बाड़े (dockyard) में 100 टन से अधिक वज़न के 159 जहाज़ अंग्रेज़ों द्वारा बनाए गए।

प्रारंभिक मध्ययुगीन काल में भूमि अनुदान की प्रथा का विकास देखा गया जिसके द्वारा अधिक से अधिक अकृष्ट भूमि को खेती के तहत लाया गया। दक्षिण भारत में मंदिर एक ऐसी संस्था के रूप में उभरा जिसने विभिन्न कार्यों को निभाया, भूमि और धन के संसाधन जुटाए और कृषि विकास को बढ़ावा देने के लिए भी कई प्रयास किया। दिल्ली सल्तनत के दौरान उत्तर भारत में घने जंगल थे। जब मुहम्मद बिन तुगलक ने दोआब क्षेत्र में कर बढ़ा दिया तो इसे दिल्ली और पूरे दोआब क्षेत्र में 1334–35 में अकाल पड़ा। बरनी के अनुसार अकाल सात वर्षों तक जारी रहा। बदायूंनी/बदायुनी बताता है कि इस संकट की घड़ी में किसानों ने विद्रोह कर दिया था और जंगलों की ओर भाग गए थे। ऐसा माना जाता है कि 12–13वीं शताब्दी के दौरान गंगा–यमुना दोआब में अभी भी घने जंगल थे। फवाद अल फुआद के अनुसार 12वीं सदी में बदायूं और दिल्ली के बीच बाघ इंसानों पर हमला करते थे। पर 16वीं सदी में डब्ल्यू. एच. मोरलैंड का कहना है कि इन सभी क्षेत्रों को खेती के अंतर्गत लाया गया था। मुगलों से पहले वनों की सटीक सीमा ज्ञात नहीं थी। कृषि विस्तार ने वन पारिस्थितिकी तंत्र को प्रभावित किया। अधिक कृषि योग्य भूमि के लिए वनों की कटाई से वन भूमि के क्षेत्रफल में पहले से कमी आई और कृषि भूमि का और विस्तार हुआ। नई फसलें लगाई गईं। जैसा कि हमने पहले देखा कि सिंचाई के लिए कृत्रिम साधनों और तकनीकों में सुधार ने कृषि विस्तार और अधिशेष उपज में योगदान दिया। शहरीकरण और मानव बस्तियों के विकास के लिए भी वनों की सफ़ाई की आवश्यकता थी। परन्तु कृषि विस्तार के बावजूद भूमि के बड़े हिस्से को अभी भी स्थायी रूप से कृषि भूमि में नहीं बदला गया था जहां अब भी चरवाहे और आदिवासी समाज बसते थे। हालांकि खेती योग्य भूमि के

विस्तार ने विशेष रूप से उपजाऊ क्षेत्रों में जनजातियों को आसीन जीवन शैली अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया। 11वीं और 16वीं शताब्दी के बीच पंजाब क्षेत्र में जाटों ने पशुचारण का त्याग कर कृषि व्यवसाय को अपनाया। और किसान बन गए। जबकि कठोर जलवायु वाले क्षेत्रों, जैसे सिंध में, वे पशुचारक बने रहे। इसलिए मानव गतिविधियों को निर्धारित करने में जलवायु परिस्थितियाँ एक महत्वपूर्ण कारक थीं लेकिन मानव प्रयासों से भौतिक परिदृश्य भी परिवर्तन के दौर से गुज़र रहे थे।

4.5 व्यापार और उद्योग

सूती और रेशमी कपड़े बनाने के लिए मुगल बादशाहों के अपने कारखाने थे। इस काल के दौरान नील मुख्य निर्यात वस्तुओं में से एक था। भारत में अंग्रेज़ों द्वारा किसानों से जबरदस्ती नील की खेती करवाने से पहले अकबर के शासन काल में यूरोपीय कंपनियों के बीच नील की खेती के कारण प्रतिद्वंद्विता रहती थी। इस प्रकार इस दौरान भी कई भूमिहीन मज़दूरों ने नील के खेतों में काम किया। 17वीं शताब्दी का फ्रांसीसी जौहरी और यात्री जीन बैप्टिस्ट टैवर्नियर बताता है कि नील को छानने में लगे श्रमिकों को ऐसा करते समय सतर्क रहना पड़ता था और अपने नाक और मुंह को कपड़े के एक टुकड़े से ढकना पड़ता था ताकि धूल को नथुने के माध्यम से उनके शरीर में अवशोषित होने से रोका जा सके क्योंकि नील की धूल को सांस में लेने पर अत्यधिक मर्मज्ञ और स्वास्थ्य के लिए हानिकारक माना जाता है।

मुगल काल के दौरान एक और महत्वपूर्ण निर्यात वस्तु अफीम थी। खसखस की खेती (जिससे अफीम प्राप्त की जाती है) लाभदायक थी और राज्यों के लिए

राजस्व का एक अहम स्रोत था। 1590 से शुरू होकर लगभग 19 वर्षों की अवधि में मुगल साम्राज्य में जो विभिन्न वस्तुओं के मूल्य थे अबुल फ़ज़ल ने उनका एक सांख्यिकीय आंकड़ा प्रस्तुत किया है और नील, पोस्ता और चीनी का तीन सबसे मूल्यवान वस्तुओं के रूप में उल्लेख किया है। हुमायूँ और जहाँगीर जैसे मुगल बादशाह अफीम के आदी होने के लिए जाने जाते थे। अफीम की अत्यधिक लत के कारण अकबर ने अपने बेटों दानियाल और मुराद को खो दिया। अबुल फ़ज़ल का 'अकबरनामा' मुगल अभिजात वर्ग में अफीम की लत को दर्शाता है। लेकिन क्योंकि यह एक अहम निर्यात वस्तु थी इसके सेवन की प्रथा पर रोक नहीं लग सकी। मुगल अभिजात वर्ग के बीच तंबाकू धूम्रपान एक और लत थी जो बहुत ही तेजी से लोकप्रिय हो गई थी। यह लत मुगलों के दरबार में बीजापुर के आदिल शाहियों के दरबार से राजनयिक मिशनों के माध्यम से पहुँची। तम्बाकू पुर्तगालियों के माध्यम से भारत पहुँचा और बीजापुर में लाया गया। जल्द ही यह दक्कन में एक लोकप्रिय उत्पाद बन गया। वर्तमान आन्ध्र प्रदेश तंबाकू उत्पादन का एक प्रमुख केंद्र बन गया जहाँ से तंबाकू का निर्यात दक्षिण–पूर्व एशिया और सुदूर पूर्व में किया जाता था।

मुगल स्थापत्य संरचनाएं अपने उत्कृष्ट ''पर्चिनकारी (पिएत्रा डयूरा)'' के काम के लिए प्रसिद्ध हैं और यह कला अभी भी आगरा में मौजूद है। हालांकि रत्नों के साथ काम करना और सुंदर ज्यामितीय या वनस्पतियों का स्वरूप बनाने के लिए उन्हें छोटे आकार में तराशना सरल कार्य नहीं है। इन चमकते रत्नों को तराशते समय इनकी धूल को श्वास के माध्यम से अंदर लेने से स्वास्थ्य के लिए खतरा हो सकता है। सुलेमानी पत्थर (Agate) की धूल अत्यधिक

ज़हरीली होती है क्योंकि इसमें सिलिका पाई जाती है। फ़िरोज़ा (Turquoise) और गार्नेट (Garnet) भी सिलिका से दूषित हो सकते हैं। सिलिका के संपर्क में आने से कैंसर, गुर्दे की बीमारी और अन्य बिमारियाँ होतो हैं। इसी तरह बलुआ पत्थरों, संगमरमर आदि से बने शानदार भवनों के निर्माण में लगे श्रमिकों को भी स्वास्थ्य संबंधी खतरे रहे होंगे। इस प्रकार मनुष्य प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग और दुरूपयोग किया करता था।

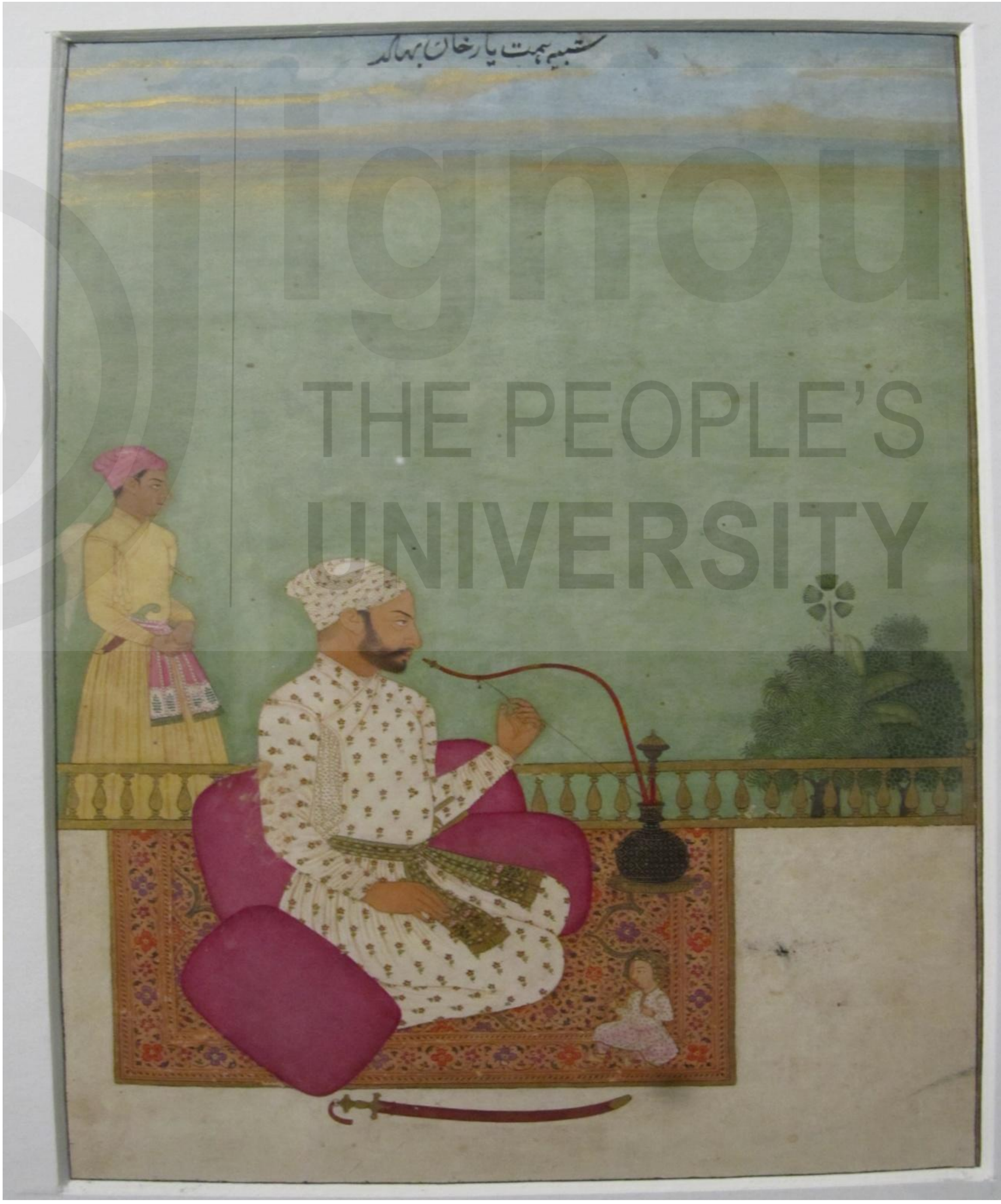

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

आमिर हिम्मत यार खान[2] हुक्का पीते हुए। हैदराबाद। 18वीं शताब्दी के अंत में। ''नौरसः द मैनी आर्टस ऑफ़ द डेक्कन'' प्रदर्शनी। राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली। स्रोतः डॉ. ऋचा सिंह।

बोध प्रश्न 2

1) मध्यकाल के कुछ जल प्रबंधन तकनीकों और उनके महत्व का वर्णन करें।

....

....

....

....

....

....

2) रिक्त स्थान भरें:

क) अरब के जहाज़ मालाबार के .... की लकड़ी से बनाए जाते थे।

---

[2] वह हैदराबाद के आसफ जाही वंश के दूसरे निज़ाम, निज़ाम अली खान की सेवा में थे।

ख) मध्ययुगीन काल के दौरान पंजाब क्षेत्र में जाटों ने .... छोड़ दिया और .... व्यवसाय को अपनाया जबकि वे सिंध में .... बने रहे।

ग) मुगलों के दरबार में .... बीजापुर के आदिल शाहियों के दरबार से राजनयिक मिशनों के माध्यम से लाया गया।

3) निम्नलिखित को समेुलित कीजिए।

क)	पर्चिनकारी	(i)	इसकी लत के कारण दो मुगल राजकुमारों की मौत हुई – दानियाल और मुराद।
ख)	नील	(ii)	यह कुछ रत्नों में पाया जाता है जैसे सुलेमानी पत्थर, फ़िरोज़ा आदि और इसकी धूल स्वास्थ्य के लिए अत्यधिक हानिकारक होती है।
ग)	अफीम	(iii)	मुगल साम्राज्य के मुख्य निर्यात के वस्तुओं में से एक।

घ)	सिलिका	(iv)	कटे और जड़े हुए व तराशे और चमकाए हुए रंगीन पत्थरों के टुकड़ों से पत्थर में संदुर ज्यामितीय या वनस्पतियों के स्वरूप बनाने की कला।

4.6 सारांश

हमने प्रस्तुत इकाई में भारत के मध्यकाल के दौरान पर्यावरणीय और मनुष्यों के बीच के संबंध के विभिन्न पहलुओं को देखा। इस अवधि के दौरान राज्य प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग पर बहुत अधिक निर्भर थे। वे युद्ध, बोझा ढोने, भोजन आदि के लिए ज़ानवरों, भूमि, जल आदि पर निर्भर थे। इन संसाधनों की प्राप्ति के लिए वे प्रायः युद्ध करते थे और आस–पास के प्रतिद्वंद्वी राज्यों को इनसे वंचित रखने का प्रयास करते थे ताकि वे अधिक शक्तिशाली हो सकें। संसाधनों पर नियंत्रण ने राजा के अन्य शासकों के साथ–साथ उसकी प्रजा और स्थानीय सरदारों के साथ संबंधों को परिभाषित किया। अतः रामचंद्र गुहा और माधव गाडगिल जैसे इतिहासकारों का प्रस्ताव, जो इस विचार का समर्थन करता है कि औपनिवेशिक युग से पहले पारंपरिक समाजों द्वारा प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग किया गया था, का खंडन हाल के इतिहास लेखन में मिलता है। इस सामान्यीकृत धारण के खिलाफ़ हाल के लेखन से हमें पता चलता है कि शासकों और अभिजात वर्गों ने प्राकृतिक संसाधनों पर दावा किया और सक्रिय रूप से अपने दावों की रक्षा की और वे राज्य के हस्तक्षेप के

दायरे का विस्तार करने के लिए उत्सुक थे। औद्योगिक क्रांति और औपनिवेशिक विस्तार के आगमन के साथ प्राकृतिक संसाधनों के दोहन की भयावहता तेज हो गई जिसके बारे में आप आगे की इकाई में पढ़ेंगे।

4.7 शब्दावली

दोआब : दो नदियों के बीच के स्थल–क्षेत्र को दोआब कहते हैं। यह भूमि जलोढ़ मिट्टी की उपस्थिति के कारण उपजाऊ होती है।

पारिस्थितिक साम्राज्यवाद : यह अल्फ्रेड क्रॉस्बी द्वारा प्रतिपादित एक सिद्धांत है जिसके अनुसार यूरोपियों ने आकस्मिक या जानबूझकर विदेशी वनस्पतियों और जीवों के परिचय के माध्यम से स्थानीय आबादी (मनुष्यों, जानवरों और पौधों) में गिरावट और उनकी पारिस्थितिकी में बदलाव लाकर औपनिवेशिक साम्राज्यों का सफलतापूर्वक निर्माण किया।

साकिया : यह बैल, खच्चर या ऊँट जैसे जानवरों की सहायता से एक कुएँ से यांत्रिक रूप से पानी उठाने का एक उपकरण है। जानवर क्षैतिज पहिये को घुमाता है जो एक

ऊर्ध्वाधर पहिया से जुड़ा होता है। इसे फ़ारसी पहिया या ''रहट'' भी कहा जाता है। यह ''नोरिया'' से अलग है। हालांकि दोनों ही पानी उठाने वाले उपकरण हैं और इनमें पानी के बर्तन या बाल्टी ऊर्ध्वाधर पहिया से जुड़े होते हैं लेकिन ''नोरिया'' हमेशा नदी के बहते हुए पानी में ही व्यावहारिक होता है ना कि ठहरे हुए पानी में। प्राचीन ग्रंथों में साकिया का ''अरघट्ट'' के नाम से वर्णन किया गया है।

कमरगाह : भूमि का एक बड़ा हिस्सा सैनिकों द्वारा घेर लिया जाता था और हज़ारों जानवरों को केंद्र में इकट्ठा कर लिया जाता था। मुगल सम्राट घेरे में प्रवेश कर उन इकट्ठे किये जानवरों का शिकार करता था। जब तक वह शिकार नहीं कर लेता तब तक कोई और घेरे के अंदर कदम नहीं रख सकता था। चूंकि शिकार के इस तरीके में जंगल के एक बड़े हिस्से को घेरा जाता था इसलिए आमतौर पर जानवरों को घेरने और इकट्ठा करने और उनका शिकार

करने में महीनों लग जाते थे। कमरगाह को सैनिकों को सक्रिय रखने और सैन्य कौशल का अभ्यास करने का एक प्रभावी तरीका माना जाता था।

4.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) भाग 4.2, उप–भाग 4.2.1, 4.2.2 और 4.2.3 देखें।

2) भाग 4.3, उप–भाग 4.3.1, 4.3.2, 4.3.3 और 4.3.4 देखें।

3) क) गलत, ख) सही, ग) गलत, घ) सही।

बोध प्रश्न 2

1) भाग 4.4 और उप–भाग 4.4.3 देखें।

2) क) सागौन, ख) पशुचारण, कृषि, पशुचारक, ग) तंबाकू।

3) क) (iv), ख) (iii), ग) (i), घ) (ii)।

4.9 संदर्भ ग्रंथ

Nath, Pratyay (2019). *Climate of Conquest, War, Environment and Empire in North India*. Delhi: Oxford University Press.

Amirthalingam, M. (2020). 'History of Earthquakes in India'. In Ranjan Chakrabarti (Ed.), *Critical Themes in Environmental History of India*. New Delhi: Sage Publications.

Kumar, Mayank (2005). 'Claims on Natural Resources: Exploring the Role of Political Power in Pre-Colonial Rajasthan, India'. *Conservation & Society*, 3(1), 134-149. Retrieved from www.jstor.org/stable/26396603.

Divyabhanusinh (2014). 'Lions, Cheetahs and Others in the Mughal Landscape'. In Mahesh Rangarajan & K. Sivaramakrishnan (Eds.), *Shifting Ground, People, Animals and Mobility India's Environmental History*. New Delhi: Oxford University Press.

Khan, Enayatullah (2017). 'Wildlife and Deer Hunt under Akbar and Jahangir'. *Journal of Humanities and Social Science*. 22(7), 10-14. Retrieved from http://www.iosrjournals.org/iosr-jhss/papers/Vol.%2022%20Issue7/Version-17/B2207171014.pdf.

Koch, Ebba (2009). 'Jahangir as Francis Bacon's Ideal of the King as an Observer and Investigator of Nature'. *Journal of the Royal Asiatic Society*, 19(3), 293-338. Retrieved from www.jstor.org/stable/27756071.

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY